KRISHNA INSTITUTE OF LAW

(Approved by BCI affiliated to CCSU, Meerut)
NH-24, Jindal Nagar, Ghaziabad-201002
Phone no- +9643031960, 9643028427

LL.B. – 3rd Sem
Subject - Professional Ethics, Accountability of Lawyers and Bar Bench relation

विधि व्यवसाय का अर्थ (Meaning of Legal Profession)

विधि व्यवसाय एक महान और आद"र्ा व्यवसाय है। इसमें विभिन्न प्रकार के कववादों और वादों को वर्तमान विधि, प्रथा तथा प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों के अनुरूप निपटाया जाता है। विधि व्यवसाय करने वाले व्यक्ति को वकील को वकील,वकील,प्लीडर, विधि सलाहकार आदि नामों से पुकारा जाता है।

विधि व्यवसाय की प्रकृति और महत्व

विधि व्यवसाय एकमात्र ऐसा व्यवसाय है जिसमें विधि–व्यवसायी को विभिन्न प्रकार के मानवीय सम्बन्धों तथा कार्यकलापों मे सामंजस्य स्थापित करते हुए न्याय और उत्पीड़न करना पड़ता है। यह एक विद्धत व्यवसाय है जिसका उद्दे"य अन्याय और उत्पीड़न का ि"ाकार व्यक्तियों को न्यायालय के माध्यम से राहत प्रदान करना है जिससे कि ऐसे व्यक्तियों के सवैधानिक और मानवीय अधिकारों की रक्षा हो सके और वे सम्मानपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सकें।

अभय प्रकाश सहाय बनाम उच्च न्यायालय, पटना में यह कहा गया है कि वकालत का पे"ाा आरंभ से ही एक उच्च–स्तरीय बौद्धिक और नैतिक व्यवसाय माना जाता रहा है। समाज में इसका प्रतिष्ठित स्थान रहा है। विधिक व्यवसायी ना केवल पक्षों की सहायता करता है, बल्कि न्याय–प्र"ाासन में न्यायालयों की सहायता भी करता है

विधि व्यवसाय की विशेषताएं

1. यह एक ज्ञानपूर्ण व्यवसाय है।
2. इसमें विधि व्यवसायी को मानव के विभिन्न संव्यवहारों का ज्ञान रखना होता है।
3. यह एक स्वतन्त्र व्यवसाय है जिसमे सेवा भावना प्रमुख होती है।
4. इस व्यवसाय में विधि व्यवसायी विभिन्न प्रकार के विश्वास के रिश्तों से बाध्य होता है।

5. इस व्यवसाय में विधि व्यवसायी द्वारा विज्ञापन करना, दलालों की नियुक्ति और सहारा लेना विधि, और व्यवसायिक नीति के खिलाफ है।
6. इस व्यवसाय में बार और बैंच के बीच मधुर सम्बन्ध होने जरूरी है।
7. विधि व्यवसाय में दलालों की नियुक्ति पूरी तरह से वर्जित है
8. वकील विधिक नीति के अनुसार मुवक्किल के हितों का न्यासी है। न्यासी की हैसियत से उन्हें वे सभी कार्य करने चाहिये, जो मुवक्किल के हित में है।
9. चूँकि विधिक व्यवसाय व्यापार नहीं है, अतः एक वकील को दूसरे वकील के प्रति प्रतिस्पर्धा तथा ईर्ष्या की भावना नहीं रखनी चाहिए।
10. किसी भी वकील को इस प्रकार का कार्य अपने हाथों में नहीं लेना चाहिए,जो उसे व्यवसाय की निष्ठा के विपरीत कार्य करने के लिए प्रेरित करता हो।

विधि व्यवसाय और सामान्य व्यवसाय में अन्तर

(Differences Between Legal profession and ordinary)

1. कानूनी व्यवसाय में वकील, न्यायिक अधिकारी, वादकारी और अन्य न्यायिक कर्मचारी से सम्बन्धित होते हैं, जबकि सामान्य व्यवसाय में क्रेता, विक्रेता, निर्माता, व्यापारी, उत्पादक, अभिकर्त्ता आदि होते हैं।
2. विधि पेशे में वकील का अपने पेशे का विज्ञापन करने की मनाई होती है, जबकि सामान्य व्यवसाय में विज्ञापन किये जाने पर कोई रोक नहीं है।
3. विधि पेशे में धन कमाने की बजाय, जन–सेवा का उद्देश्य माना जाता है।
4. विधि व्यवसाय में वकील तथा वादकारी का सम्बन्ध विश्वासपूर्ण और गोपनीयता से पूर्ण होता है जबकि सामान्य व्यवसाय में ऐसा होना आवश्यक नहीं होता।
5. कानूनी पेशे में अभिकत्ताओं की नियुक्ति तथा सहायता पूर्णता वर्जित है, जबकि सामान्य व्यवसाय में दलालों का होना व्यापार की उन्नति के लिए बहुत आवश्यक समझा जाता है।
6. जबकि सामान्य व्यवसाय में कुछ अपवादों को छोड़कर व्यवसायियों के लिए विशेष शिक्षा प्राप्त करना आवश्यक नहीं होता।

वकील का अर्थ (Meaning of Advocate)

वकील से तात्पर्य ऐसे व्यक्ति से है जो अन्य व्यक्ति की ओर से वक्तत्वय देता है या बोलता है या पैरवी करता है। न्यायालयो में वकील अपने–अपने पक्षों की ओर से पैरवी करते हैं और उन्हें विजयी बनाने के लिए परिश्रम करते है तथा ऐसा करने के लिए अपना पारिश्रमिक लेते हैं।

वकील अधिनियम की धारा 30 में यह प्रावधान किया गया है कि इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए ऐसा व्यक्ति जिसका नाम वकील नामावली में प्रविष्ट है–

1. उच्चतम न्यायालय, उचच न्यायालय और अन्य अधीनीस्थ न्याालयों में,
2. किसी न्यायाधिकरण या साक्ष्य लेने के लिए विधिक रूप से प्राधिकृत व्यक्ति के समक्ष, तथा
3. ऐसे किसी व्यक्ति या प्राधिकारी के समक्ष जहाँ कोई वकील उस समय प्रचलित किसी विधि के अधीन विधि पेशा करने के लिए अधिकृत हो, विधि व्यवसाय करने का हकदार है।

Qualification of Advocates

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. उसने इक्कीस वर्ष की आयु पूरी कर ली हो।
3. उसने भारत के किसी राज्य क्षेत्र के किसी विश्वविद्यालय से विधि की उपाधि प्राप्त कर ली है।
4. वह ऐसी अन्य शर्तें पूरी करता है, जो इस अध्याय के अधिन राज्य विधिज्ञ परिषद द्वारा बनाये गये नियमों में निर्धारित की जाये।
5. उसने नामांकन के लिए भारतीय स्टाम्प अधिनियम के अधीन स्टाम्प शुल्क यदि कोई हो तो उसे बैंक ड्राफ्ट द्वारा उस परिषद के पक्ष में देय की नामांकन फीस दे दी है।

बलदेव राज शर्मा बनाम बार काउन्सिल ऑफ इण्डिया में एक व्यक्ति जिसने विधि की डिग्री दो वर्ष तक व्यक्तिगत छात्र के रूप में प्राप्त कर तथा तृतीय वर्ष की डिग्री नियमित छात्र के रूप में प्राप्त की हो तो उसे पंजीकरण के लिए हकदार नहीं माना गया।

वरिष्ठ अधिवक्ता (Senior Advocate)

वरिष्ठ तथा अन्य अधिवक्ता—धारा 16 के अनुसार, अधिवक्ताओं के दो वर्ग होंगें—

(1) वरिष्ठ अधिवक्ता और

(2) अन्य अधिवक्ता।

किसी अधिवक्ता को उसकी सहमति से, वरिष्ठ अधिवक्ता का पदनाम दिया जा सकेगा ब"र्ते कि उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय की यह राय है कि कोई अधिवक्ता अपनी योग्यता, विधो विषयक वि"ोष ज्ञान या अनुभव के आधार पर ऐसे सम्मान क योग्य है।

वरिष्ठता के बारे मे विवाद

धारा 21 के अनुसार, जहाँ दो या उससे अधिक व्यक्तियाँ की वरिष्ठता की तारीख एक ही हो, वहाँ आयु में वरिष्ठ व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से वरिष्ठ माना जाएगा। यदि किसी व्यक्ति की वरिष्ठता के बारे मे कोई विवाद उत्पन्न होता है तो उसे निर्णय के लिए सम्बद्ध राज्य विधिज्ञ परिषद् को निर्दिष्ट किया जाएगा।

अखिल भारतीय बार परिशद का विधि शिक्षा हेतु योगदान
The Contribution of Bar council in maintaining discipline in the legal profession.

1. **विधि शिक्षा का मापदण्ड निर्धारित करना**—अखिल भारतीय बार परिषद विधि शिक्षा हेतु मापदण्ड निर्धारित करती है। यदि उन मापदण्डों का पालन नहीं किया जाता तो वह उन विधि स्नातकों को वकील के रूप में पंजीकृत करने से इन्कार कर सकती है, जिन्होंने अखिल भारतीय बार परिषद के द्वारा स्थापित मापदण्डों का पालन नहीं किया है।
2. **विधि शिक्षा का संचालन करना**—बार काउसिल विधि की शिक्षा का संचालन करती है। बार काउंसिल उन विषयों का निर्धारण करती है जो विधि स्नातक को पढ़ाए जाने चाहिये। बार काउसिल विधि कक्षाओं में प्रवेश हेतु नियम तथा उपनियम बना सकती है।

3. **वकीलों के कल्याण हेतु व्यवस्थायें करना**—बार काउसिल वकील के कल्याण हेतु भी व्यवस्थाएँ कर सकती है। इस क्षेत्र में बार काउंसिल में वकीलों का बीमा, वकीलों के भविष्य निधि से सम्बन्धित व्यवस्थाएँ भी की गई है। बार काउंसिल आवश्यकता पड़ने पर वकीलों को आर्थिक सहायता भी उपलब्ध कराती है।
4. **वकीलों में अनुशासन बनाने हेतु व्यवस्था करना**—विधि व्यवसाय में अनुशासन बनाए रखने हेतु बार परिषद समय—समय पर नियम तथा उपनियम बनाती है। इन नियमें तथा उपनियमों का पालन करना विधि व्यवसाय में संलग्न व्यक्तियें का कर्त्तव्य होता है। यदि कोई वकील इन नियमों को उल्लंघन करता है तो बार परिषद उसे दण्डित कर सकती है। इस प्रकार बार परिषद को अर्ध—न्यायिक अधिकार भी प्राप्त है।

वकीलो के अधिकार (Rights of Advocate)

1. **पक्षो की पैरवी करने का अधिकार**—वकीलों का सर्वप्रथम अधिकार न्यायालयों में पैरवी करना अर्थात् किसी मामले में अपने पक्षकार काप्रतिनिधित्व करना है। वकील ही अपने पक्ष की बात न्यायालय के सामने रखता है। पैरवी करने का अधिकार केवल उन्ही निर्धारित योग्यता प्राप्त वकीलों का होता है जो कम से कम विधि स्नातक है तथा वे प्रदेश के बार कौंसिल में वकील के रूप में पंजीकृत हैं।
2. **पक्षों की ओर से राजीनामा करने का अधिकार**—वकीलों को अपने पक्षकरों की ओर से किसी मामलें में राजीनामा करने का अधिकार भी दिया गया है। कोई भी वकील अपने पक्षकारों से निर्देश प्राप्त करके किसी मामले मं राजीनामा पेश कर सकता है। उस राजीनामें का वही प्रभाव होता है जैसा पक्षकारों द्वारा राजीनामा किये जाने का होता ह।
3. **न्यायालय में बैठने का अधिकार**—प्रत्येक वकील को अपने मामले की सुनवाई की प्रतीक्षा के दौरान न्यायालय में की गई बैठक व्यवस्था में स्थान पाने का अधिकार होता है।
4. **दस्तावेजों के निरीक्षण का अधिकार**—वकीलों को अपने पक्षों से संबधित किसी पत्रावली, दस्तावेज आदि का निरीखण करने का अधिक्कार होता है। इसके लिए वे नियमानुसार शुल्क जमा करा कर न्यायालय की अनुमति स पत्रावली, दस्तावेजी आदि का निरीक्षण कर सकते हैं।

5. **दस्तावेजो की प्रतिलिपि प्रापत करने का अधिकार**—वकीलों को अपने पक्षों से संबंधित मामलों में किसी कार्यवाही दस्तावेज, आदेशों, निर्णयों या डिक्री आदि की प्रतिलिपि प्राप्त करने का अकिार है। इसके लिए वकीलों को निर्धारित प्रपत्र में शुल्क सहित आवेदन करना होता है। इसके लिए वकील को निर्धारित प्रपत्र में शुल्क सहित आवेदन करना होता है।
6. **पूर्व निर्णय पेश करने का अधिकार**—वकील अपने मामले में पैरवी के दौरान उच्च या उच्चतम न्यायालय के पूर्व—निर्णयों को पेश कर सकता है। ऐसे पूर्व—निर्णय, आदेश, निर्णय या डिक्री पारित करते समय विचार में लिये जाते हैं। यधपि ऐसे निर्णय हमेशा बहस के दौरान ही पेश कर दिये जाने चाहियें। लेकिन यदि उस समय उपलब्ध नहीं हो तो न्यायालय की अनुमति से बाद में भी पेश किये जा सकते हैं।
7. **कानूनी बहस के लिए संक्षिप्त विवरण पेश करने का अधिकार**—यदि वकील किसी कार्य की वजह से न्यायालय में उपस्थिति' नही हो पाते है तो ऐसी स्थिति में वे अपनी ओर से उपस्थिति देने हेतु किसी अन्य वकील को कान्नी बहस के लिए संक्षिप्त विवरण पेश कर सकते हैं।
8. **कमिश्नर नियुक्त होने का अधिकार**—वकील किसी मामले में साक्ष्य लेने हेतु या किसी स्थान, लेखा, फर्म आदि का निरीक्षण करने हेतु कमिश्नर के रूप में नियुक्त हो सकते हैं। ऐसे मामलों में न्यायालय द्वारा उनको पारिश्रमिक भी दिलाया जाता है।
9. **पेशेगत संसूचनाओं को गुप्त रखने का अधिकार**—भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 126 के अनुसार, यदि वकीलों को पैरवी के दौरान अपने पक्षों से किसी भी प्रकार की सूचना, साक्ष्य आदि मिलती है तो वकील को ऐसी सूचना भी साक्ष्य की प्रकट करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है।
10. **प्रापक नियुक्त होने का अधिकार**—कुछ विवादित मामले में वादग्रस्त सम्पत्ति की सुरक्षा हेतु प्रवधान सिविल प्रकिया संहिता तथा दण्ड प्रकिया संहिता के अन्तर्गत है। रिसीवर के रूप में वकील को नियुक्त किया जा सकता है। ऐसे रिसीवर को न्यायालय के आदेश द्वारा उचित पारिश्रमिक भी दिलाया जाता है। रिसीवर को हमेशा अपनी अधिकारिता म रहकर ही कार्य करना चाहिए।

11. **पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार**—वकीलों को अपने पक्षकारों की ओर से पैरवी करने के बदले पारिश्रमिक पाने का अधिकार है। यदि कोई पक्षकार समय पर पारिश्रमिक का भुगतान नहीं करता है या भुगतान करने से इंकार करता है तो वकील ऐसे पारिश्रमिक को विधि अनुसार वसूल कर सकता है।
12. **शपथ आयुक्त के रूप में नियुक्त होने का अधिकार**— न्यायिक कार्यवाही के दौरान पेश किये जाने वाले शपथ—पत्रों को प्रमाणित करने क लिए शपथ आयुक्त के रूप में वकीलों की नियुक्ति सिविल और आपराधिक मामलों में जिला न्यायधीश क्षरा और राजस्व मामलों में कलेक्टर द्वारा की जाती है।
13. **नोटेरी पब्लिक के रूप में नियुक्त होने क अधिकार**—शपथ—पत्र, दस्तावेज आदि प्रमाणित करने के लिए सामान्यतया नोटेरी पब्लिक की नियुक्ति की जाने का भो प्रावधान है।

वी0 सुन्दीर बनाम बार कौंसिल ऑफ इण्डिया—उच्चतम न्यायालय ने कहा कि वकीलों के रूप में नामाकित प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार में केवल स्थगन प्रापत करना ही शामिल नहीं है, बल्कि अपने पक्षकार की ओर से न्ययालय में उपस्थित होकर उसके मामले में अभिवचन तथा तर्क पे"ा करना भी शामिल है।

वकील के कर्त्तव्य (Duties of Advocate)

1. **वकील के न्यायलय के प्रति कर्त्तव्य**— एक वकील के रूप में विधि वयवसायी के न्यायलय के प्रति निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं—

(1) न्यायालय की गरिमा बनाये रखना— वकीलों का यह कर्त्तव्य है कि वे न्यायल के प्रति सम्मान रखते हुए गरिमा बनाये रखें। वकीजों को चाहिए कि वे ऐसा कोई कार्य न करें जिससे न्यालय के सम्मान को ठेस पहुँचे।

(2) वाद को दृढ़तापूर्वक पेश करना—प्रत्येक वकील का कर्त्तव्य है कि वह न्यायालय का सम्मान अव"य करे, परन्तु न्यायालय की दासता, भ्रष्टाचार और अवैधानिक कार्यकलापों को स्वीकार न करे, बल्कि उनके विरूद्ध दृढ़तापूर्वक न्याय की रक्षा के लिए कार्य करें।

(3) व्यक्तिगत मित्रता प्रकट न करना—वकील को किसी भी न्यायिक अधिकारी से अपनी व्यक्तिगत मित्रता होने का दावा अपने पक्षकार से नहीं करना चाहिए।

(4) न्यायालय को धोखा न देना—प्रत्येक वकील का यह कर्त्तव्य है कि वह न्यायलय का वि"वास प्राप्त करे और झूठा अभिवचन, शपथ—पत्र, आवेदन—पत्र आदि पे"ा करके न्यायालय को धोखा न दे बल्कि न्यायलय के समक्ष सही तथ्यों को रखे।

(5) निर्धारित वर्दी में उपस्थित होना—प्रत्येक वकील के लिए यह आव"यक है कि वह न्यायालय के समक्ष निर्धारित पो"ााक में ही उपस्थित रहे तथा न्यायालय में पो"ााक पहनकर ही प्रवे"ा करें।

(6)न्यायिक—व्यवस्था बनाये रखने मं सहयोग करना—वकील को चाहिए कि वह न्याय—व्यवस्था को सुदुढ बनाने के लिए न्यायलय को उचित सहायता और दि"ाा निर्दे"ा दे। वाद की सुनवाई ध्यानपूर्वक करना तथा न्यायल के प्रत्येक निर्णय और आदे"ा को बिना सन्तुलन खोये स्वीकार करना वकील का कर्त्तव्य है।

2. वकील के मुवक्किलों के प्रति कर्त्तव्य—

(1) मुकदमें की पैरवी करना—वकील को अपने पक्षकार के प्रति प्रमुख कर्त्तव्य उसके मामले की पूरी ईमानदारी लगन और निष्ठापूर्वक पैरवी करना। कर्त्तव्य उसके मामले की पूरी ईमानदारी लगन आर निष्ठापूर्वक पैरवी करना।

(2) अत्याधिक फीस न वसूलना—वकीलों का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने पक्षकारों से उचित और तय की हुई फीस ही प्राप्त करें। वकीलों द्वारा अनाव"यक फीस वसूला जाना कदाचार माना जाता है।

(3) पक्षकार की उपस्थिति दर्ज—वकीलों का कर्त्तव्य है कि वे न्यायलय में अपने पक्षकार की उपस्थिति दर्ज कराये। यदि कोई पक्षकार किसी तारीख पर न्यायालय में उपस्थित नही होता है तो उसकी उपस्थिति को क्षमा किये जाने का प्रार्थनापत्र दिया जाना चाहिए। आपराधिक मामलों में वकीलों को नियमित रूप से न्यायलय में हाजिरी देनी चाहिए

(4) पक्षकारों की धनराशि का दुपरूपयोग न करना—यदि किसी पक्षकार द्वारा अपने वकील को किसी मामले में जमा कराने के लिए कोई धनरा"ि दी गई है तो वकील का यह दायित्व है कि वह उस धनरा"ि को अपने प्रयोग में न लेकर समयानुसार न्यायालय में जमा करा दे।

(5) पक्षों को ठीक सलाह देना—वकीलों का कर्त्तव्य है कि वे अपने पक्षकारों को किसी भी कानूनी मसले पर सही—सही राय दें और गलत राय देकर उन्हे गुमराह न करे।

(6) पक्षों की सम्पत्ति को न खरीदना—वकीलों का यह भी कर्त्तव्य है कि वे अपने पक्षकार के मामलों में विवादित सम्पत्ति आदि का क्रय या विक्रय करके अनुचित लाभ प्राप्त न करे और न ही किसी प्रकार का कोई संव्यवहार करे।

3.सहकर्मी वकील के प्रति कर्त्तव्य (Duties of advocate Towards Fellow Advocates)

- **स्पष्ट व सौहार्दपूर्ण तरीके से व्यवहार करना**—वकीलों का यह कर्त्तव्य है कि वे अपने सभी साथी वकीलों के प्रतिस्पष्ट और सौहार्दपूर्ण व्यवहार करे।
- **विपक्षी वकील पर दवाब न डालना**—एक वकील को अपने पक्षकार के मामले की पैरवी के दौरान उसके विपक्षी के वकील पर दवाब डालकर अनुचित लाभ होने का प्रयास नहीं करना चाहिए।
- **पक्षों में समझौता करनाने के लिए सहयोग करना**—यदि किसी मामल में वादी और प्रतिवादी समझौता करने क लिए सहमत है तो उनके वकीलों का भी यह दायित्व है कि वे पक्षकारों में समझौता कराने में एक—दूसरे का सहयोग करे।

4. वकीलों के अन्य कर्त्तव्य (Other Duties Of Advocates)

1. वकीलों का कर्त्तव्य है कि वे किसी मामले में अपने पक्षो की और से किसी भी प्रकार के मिथ्या या कूटरचित दस्तावेज आदि पेश न करे।

2. वकीलों का यह भी कर्त्तव्य है कि वे अपने विधि व्यवसाय के साथ–साथ कोई ऐसा व्यवसाय न करें जिससे विधि व्वसाय पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े। विधि व्यवसाय अन्य व्यवसाय में लग जाने पर वकील अपने व्यवसाय के साथ न्याय नहीं कर पायेगा। अतः उन्हें। पूर्ण समार्पित भाव से विधि व्यवसाय में ही लगे रहना चाहिए।
3. वकीलों का कर्त्तव्य है कि वे अपने पक्षों के मामलों की पैरवी में तत्परता बरतें और अनावश्यक स्थगन न लें। ऐसा करने से न्याय प्रक्रिया में अनावश्यक बाधा पड़ती ह और मुकदमों के निपटारे में देरी होती है।
4. वकीलों का यह कर्त्तव्य है कि वे न्यायालय में किसी दस्तावेज को दाखिल न रह जाएं। टाइपशुदा अभिलेख में गलतियाँ सुधारने की पूर्ण जिम्मेदारी वकील की होती है।
5. वकीलों से यह आशा की जाती है कि वे बार और बैंच के बीच सदैव मधुर सम्बन्ध बनाये रखें। वे कोई ऐसा कार्य न करें जिससे बार और बैंच के बीच सम्बन्धों में दरार पड़।
6. वकील को किसी ऐसे मामले में जिसमें वह सस्वयं आर्थिक रूप से हितबद्ध हो, कार्य या पैरवी नहीं करनी चाहिए। **उदाहरण**– उसे किसी ऐसी दिवालियेपन की याचिका में कार्य नहीं करना चाहिए जिसमें वह स्वय भी ऋणदाता हो।

अधिवक्तागण और न्यायिक अधिकारीगण के सम्बन्ध
(The Relationship of Bar and Bench)

निःसन्देह एक वकील न्याय–प्र"ाासन का अभिन्न अंग है। न्याय–प्र"ाासन में वकीलों की बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका होने के कारण ही वकीलों को न्यायालय का अधिकारो माना जाता है। निष्पक्ष और शीघ्र न्याय के लिए यह आव"यक है कि न्याय–प्र"ाासन स्वच्छ और पारद"ार्ी हो, वादकारियों के साथ वास्तविक न्याय हो तथा न्यायालयों में मुकदमों के निपटारें में देरी न हो और ऐसा तभी संभव है जबकि बार और बैंच के बीच सम्बन्ध मधुर और सुदृढ हो।

बार और बैंच के बीच मधुर सम्बन्धों को बनाए रखने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

1. **एक–दूसरे का सम्मान करना**–बार और बैच के सदस्यों का दायित्व है कि वे परस्पर एक–दूसरे का सम्मान करें और अपने मन में अनावश्यक अहम् को स्थान न दें। वकील

न्यायिक अधिकारियों को सम्मान की दृष्टि से देखें तथा न्यायिक अधिकारी वकीलों को अपेक्षित सम्मान दें।

1. **मधुर और शालीन व्यवहार रखना**—बार और बैंच के सदस्या को चाहिए कि वे सम्पर्क और व्यवहार में कटूता तथा कठोरता न आने दें।
2. **कोध और उत्तेजना न लाना**—बार और बैंच के बीच मधुर सम्बन्ध बनाए रखने के लिए अपेक्षित है कि इसके सदस्य अनावश्यक क्रोध और उत्तेजना से बचें, क्योंकि क्रोध और उत्तेजना का प्रत्यक्ष और प्रतिकूल प्रभाव पक्षकारों पर पड़ा है।
3. **निन्दात्मक और आलेचनात्मक टिप्पणी न करें**—बार और बैच के सदस्यों का यह कर्त्तव्य है कि वे एक—दूसरे की कार्यप्रणाली के प्रति न तो निन्दा ही करें और न ही उनके व्यवहार और आचरण की आलोचना करें।
4. **अनावश्यक विद्धत्ता का प्रदर्शन न करें**—बार और बैच के बीच मधुरतापूर्ण सम्बन्ध बनाए रखने के लिए यह भी आवश्यक है कि उसके सदस्य अपने ज्ञान और विद्धत्त का अनावश्यक परिचय और प्रदर्शन न करें।
5. **सुख—दुःख में सहभागी बनें**—बार और बैंच के सदस्यों मे एक—दूसरे के सुख—दुख में सहभागी बनने की प्रवृत्ति होने से भी बार और बैच के सम्बन्ध मधुर और प्रगाढ़ बनत हैं। विपत्ति अथवा विपदा की स्थिति आ पड़ने पर बार और के सदस्यों को एक—दूसरे की सहायता और सहयोग करने से पीछे नहीं हटाना चाहिए।
6. **व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप न करें**—बार और बैंच के बीच मधुर सम्बन्ध बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि बार और बैंच के सदस्य एक—दूसरे के व्यक्तिगत जीवन में हस्तक्षेप न करें।
7. **अनुचित गतिविधियों में भाग न लें**—बार और बैंच के सदस्यों का यह कर्त्तव्य है कि वे सदैव अपने मामलों और पक्षकारों के प्रति निष्ठावान रहते हुए अनुचित गतिविधियों तथा हड़ताल, नारेबाजी, काम बन्द करना, प्रदर्शन आदि का सहारा न लें। कोई त्रुटि या गलती हो जाने की स्थिति में वकील और न्यायिक अधिकारी परस्पर विचार—विमर्श और चिन्तन द्वारा उसका समाधान कर सकते हैं।

व्यावसायिक नीति का अर्थ (Meaning of Professional Ethics)

न्याय–प्र"ाासन में एक वकील का सम्बन्ध न्यायिक अधिकारियो, वादकारियों तथा अपने साथी वकीलों से होता है। ऐसी अवस्था में वकीलो को अपना कार्य,और व्यवहार में सत्यनिष्ठा का परिचय देते हुए व्यावसायिक नीति का पालन करना पड़ता है। 'यधपि व्यवसायिक नीति की कोई वि"ाष्ट परिभाषा नहीं।

न्यायमूर्ति नामेश्वर प्रसाद के अनुसार, "विधि व्यवसाय के सन्दर्भ में व्यवसायिक नीति वह लिखित या अलिखित संहिता है, जो विधि व्यवसायी के, अपने प्रति, अपने पक्षकार के प्रति, अपने विरोधी पक्ष तथा न्यायलय के प्रति व्यवहार को संचालित करती है।''

विभिन्न व्यावसायिक दुराचरण (Various Professional Misconduct)

विभिन्न व्यावसायिक दुराचरण–मुख्य रूप से निम्नलिखित तीन भिन्न परिस्थितियों में व्यावसायिक दुराचरण उत्पन्न होता है–

1. **सामान्य व्यवसाय से सम्बन्धित दुराचरण**–प्रत्येक वकील सामान्य व्यवसाय क प्रति दायित्वाधीन और कर्त्तव्यबद्ध है। यदि कोई वकील अपने उन आभारों और कर्त्तव्यों का दुरूपयोग करता है तो वह दुराचरण का दोषी माना जायेगा।

   व्यावसायिक दुराचरण के उदाहरण–

   - जहाँ वकील व्यर्थ की मुकदमेबाजी बढाने के उद्दे"य से अपने पक्षकार को धन ऋण के रूप में देता है।
   - जहाँ वकील न्यायाधिकारी की आज्ञा के खिलाफ कार्य करता है।
   - जहाँ कोई वकील अपना विज्ञापन के जरिये प्रचार करता है तो ऐसे कार्य इसी श्रेणी में आते ह।
   - जहाँ कोई वकील अपने व्यावसाय के अलावा अन्य कोई व्यवसाय करता है तो वह व्यावसायिक दुराचरण का दोषी होगा। **डा0 हनीराज एल0 चुलानी बनाम महाराष्ट्र बार कौंसिल**

- जहाँ कोई वकील उपेक्षापूर्ण असावधानी से किसी वाद का संचालन करता है तो वह व्यावसायिक दुराचरण को दोषी होगा क्योंकि वकील का यह कर्त्तव्य है कि वह सावधानीपूर्वक अपने पक्षकार के हितों की रक्षा करें।
- जब कोई वकील किसी समाज विरोधी कार्य में संलग्न रहता है ता वह दुरांचरण का दोषी होगा।
- जब कोई वकील किसी महिला के साथ अ"ोभनीय व्यवहार करता है या उसके प्रति शारीरिक अतिचार करता है तथा इसके लिए यदि उसे भारतीय दण्ड संहिता के अन्तर्गत किसी अपराध के लिए दोष सिद्ध किया जाता है तो वह दुराचरण का दोषी होता है।

2. **न्यायालय से सम्बन्धित दुराचरण**—वकील को अपना व्यवसाय करते समय अपने कर्त्तव्यों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। यदि एक अधिवक्ता अपने पक्षकार के हितो का संरखण करते समय अपने उस कर्त्तव्य का उल्लंघन कर देता है जो न्यायालय के प्रति होता है तो भी वह दुराचरण का दोषी होता है।

न्यायालय के प्रति दुराचरण के उदाहरण

- जहाँ वकील अनाव"यक रूप से हस्तक्षेप करता है तो उसे दुराचरण माना जायेगा।
- जब कोई वकील बिना किसी औचित्य के न्यायालय से स्थगन आदे"ाों की याचना करता है तो उसे दुराचरण माना जाता है।
- यदि वकील किसी व्यक्ति को नहीं जानता किन्तु उसे प्रमाणित कर देता है तो उसे दुराचरण माना जाता है।
- जहाँ वकील न्यायालय को किसी मामले में निर्णय अपने मुवक्किल के पक्ष में करने के लिए रि"वत देने का प्रयास करता है तो उसे दुराचरण माना जाता है।
- जहाँ कोई वकील किसी मामले में न्यायालय के समक्ष एक पक्षकार की ओर से उपस्थित हो जाता है तथा बाद में वह विपक्षी की ओर से वकील हो जाता है तो उसका यह कार्य दुराचरण होता है।

- कोई वकील यदि न्यायालय के अभिलेखों में हेराफेरी या जालसाजी करता है तो वह दुराचरण होता है।
- जहाँ कोई वकील विरोधी पक्ष के गवाह को न्यायालय में उपस्थित होने से रोकता है तो वह दुराचरण का दोषी माना जायेगा।

3. **पक्षकार के प्रति दुराचरण**—वकील और वादकारी का सम्बन्ध विश्वास पर आधारित होता है। यदि काई भी वकील अपने पक्षकार के प्रति विश्वासघात करता है तो वह दुराचरण का दोषी माना जाता है।

पक्षकार के प्रति दुराचरण के कुछ सामान्य उदाहरण—

- कोई वकील यदि एक बार किसी पक्षकार के किसी वाद को स्वीकार कर लेता है तो फिर भविष्य मे वह उसे त्याग नहीं सकता। यदि अकारण ही वह अपने ही पक्षकार से सम्बन्ध तोड़ लेता है तो वह दुराचरण का दोषी माना जायेगा।
- कोई वकील यदि वादकारी के हस्ताक्षर कोरे कागजों पर वाद की विषय—वस्तु के लिए करा लेता है, किन्तु बाद में वह उन कागजों को उस विषय—वस्तु के लिए प्रयोग न करके अन्य रूप से दुरूपयोग कर लेता है तो वह व्यावसायिक दुराचार का दोषी माना जायेगा।
- हरेक वकील का यह कर्त्तव्य है कि वह केवल अपने पक्ष की ही पैरवी करे। यदि वह दूसरे पक्ष की पैरवी आरम्भ कर देता है तो वह दुराचरण का दोषी माना जायेगा।
- प्रत्येक वकील का यह कर्त्तव्य है कि वह सद्भावना तथा निष्ठा से वादकारी के विलोखों की रचना करें। यदि कोई वकील इस प्रकार से विधिक कर्त्तव्य का पालन नहीं करता है तो वह दुराचरण का दोषी होगा।

बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति को वकोला क द्राचरण क लिय शक्तिया (Power of the disciplinary committee relating of the enqury made against an Advocate for the professional misconduct.)

1. **बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति की शक्तियाँ**—बार काउन्सिल की अनुशासनिक समिति को निम्नलिखित बातों के विषय मे वही शक्तियाँ प्राप्त हैं जो दीवानी प्रकिया संहिता, 1908 के अधीन दीवानी न्यायालय को प्राप्त है।
   - किसी व्यक्ति को सम्मन करना तथा उसे हाजिर करना और शपथ पर उसकी परीक्षा करना,
   - किन्हीं दस्तावेजों को प्रकट करने तथा पे"ा करने की अपेक्षा करना,
   - "ापथपत्रों पर साक्ष्य लेना,
   - किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी—अभिलेख की प्रतिलिपियों की अपेक्षा करना,
   - साक्षियों या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमी"ान निकालना,
   - कोई अन्य बात जो विहित की जाए।
2. बार कौसिल को किसी अनु"ाासन समिति के समक्ष की सभी कार्यवाहियों भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 193 तथा धारा 228 के अर्थ में न्यायिक कार्यवाहियाँ समझी जायेगी और प्रत्येक ऐसी अनु"ाासन समिति दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 480, 482, और 485 के उद्देश्यों के लिए दीवानी न्यायालय समझी जाएगी।
3. **उपधारा (1)** द्वारा दी गई शक्तियों मे से किसी का प्रयेग करने के लिए, अनुशासन समिति उन राज्यक्षेत्रों में के किसी दीवानी न्यायालय को जिन पर इस अधिनियम का विस्तार, है ऐसे साक्षी की हाजिरी के लिए या ऐसे दस्तावेज को पेश करने के लिए जो समिति द्वारा अपेक्षित है कोई समन या अन्य आदेशिका भेज सकेगी, या ऐसा कमीशन भेज सकेगी जिसे समिति निकालना चाहती है।
4. अनुशासन समिति के सामने कस मामले की सुनवाई के लिए निश्चित की गई तारीख को उस समिति के अध्यक्ष या किसी सदस्य के गैरहाजिर होने पर भी अनुशासन समिति, यदि ठीक समझे तो, इस प्रकार नियत तारीख को कार्यवाहियाँ कर सकेगी या उन्हें जारो रख

सकेगी और ऐसी कोई कार्यवाही और ऐसी किन्ही कार्यवाहियों में अनुशासन समिति द्वारा किया गया कोई भी आदेश केवल इसी कारण गैरकानूनी न होगा कि उस तारीख को उसका अध्यक्ष या सदस्य गैर हाजिर था।

5. जहाँ किसी कार्यवाही में, अनुशासन समिति के अध्यक्ष और सदस्यों की राय के अनुसार या तो उनके मुख्य बहुसंख्यक राय न होने क कारण या अन्यथा धारा 35 (3) में वर्णित प्रकृति का कोई अन्तिम आदेश, नहीं दिया जा सकता हो, वहाँ मामला, उस पर उनकी राय सहित, सम्बद्ध बार कौंसिल के अध्यक्ष के समक्ष या यदि बार कौंसिल का अध्यक्ष अनुशासन समिति के अध्यक्ष या सदस्य के रूप में कार्य कर रहा है तो बार कौसिल के उपाध्याय के सामने पेश किया जायेगा, आर बार कौसिल को यथास्थिति उक्त अध्यक्ष या उपाध्यक्ष ऐसी सुनवाई के पश्चात् जैसी वह ठीक समझे, अपनी राय देगा और अनुशासन समिति का अन्तिम आदेश ऐसी राय के अनुरूप होगा।

अनुशासनिक समिति द्वारा दिये गये दण्ड के प्रकार

वकील के विरूद्ध व्यावसायिक दुराचरण के किसी मामले में जाँच के बाद यदि वह वकील दोषी पाया जाता है तो अनु"ाासनिक समिति निम्नलिखित में से कोई भी दण्ड दे सकती है–

1. वकील को घिक्कारना
1. वकील को एक नि"चित समय क लिए वकालत से वंचित करना,
2. वकील नामावली से ऐसे वकील का नाम हटाना।

चीफ एक्जीक्यूटिव ऑफीसर एण्ड वाइस चेयरमेन, गुजरात मेरिटाइम बोर्ड बनाम पी0 जी0 पाबा में गुजरात उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि न्याय प्र"ाासन में वकील का न केवल एक महत्वपूर्ण स्थान होता है, बल्कि अधिवक्ता अधिनियम, 1961के अन्तर्गत वह विधि व्यवसाय का एकाधिकार भी प्राप्त करता है। वह पूर्णतः वकालत के प्रति ही समर्पित रहता है। यदि वह व्यवसायिक दुराचरण का दोषी पाया जाता है तो उसके विरूद्ध बार कौंसिल ऑफ इण्डिया अनु"ाासनात्मक कार्यवाही करके उसे विधि के अनुसार दंडित कर सकती है।

न्यायालय अवमानना (Contempt of court)

न्यायालय अवमानना में **सिविल** तथा **दाण्डिक** दोनों ही प्रकार के अवमानना सम्मिलित हैं।

सिविल अवमानना (Civil Contempt)

सिविल अवमानना से तात्पर्य किसी न्यायालय के किसी निर्णय, डिक्री, निर्दे"ा, आदे"ा, रिट या अन्य आदे"ा की जानबूझकर अवज्ञा करना है और इससे निजो पक्षकार को क्षति होती है और इस कारण निजी पक्षकार का इसके लिए दण्ड देने की कार्यवाही में वि"ोष रूचि होती है।

अतः सिविल अवमान उस न्यायिक आदे"ा के पालन में चूक को कहते हैं जो आदे"ा प्रतिपक्षी पक्षकार के लाभ के लिए पारित होता है। सिविल अवमान के लिए कार्यवाहो का प्रयोजन केवल अवमान के लिए दण्ड देना नहीं होता है बल्कि न्यायालय के आदे"ा का पालन करना और लागू करना भी होता है।

सिविल अवमान के तत्व (Elements of Civil Contempt)

1. जिस आदेश का उल्लंघन किया गया है वह ऐसे न्यायालय द्वारा पारित किया गया हो जिसको ऐसा आदेश पारित करने की अधिकारिता प्राप्त है।
2. जहाँ न्यायालय को कोई परिवचन दिया जाता है और उसका जानबूझकर भंग किया जाता है तो यह भी सिविल अवमान माना जाता है यह शर्तरहित और स्पष्ट होना चाहिए तथा न्यायालय को दिया गया हो।

इसे दो तरीके से दिया जा सकता है।

1. प्राथनापत्र या शपथपत्र जिसमें परिवचन का स्पष्ट उल्लेख है, उसे दाखिल करके
2. अवमानकर्त्ता द्वारा न्यायालय को स्पष्ट और अभिव्यक्त मौखिक परिवचन दिया जा सकता है जिसे न्यायालय ही अपने आदेश में अभिलिखित करता है। परिवचन का भंग जानबूझकर किया गया होना चाहिए।

दाण्डिक / आपराधिक अवमानना (Criminal Contempt)

दाण्डिक अवमानना से तात्पर्य है कि जब कोई व्यक्ति बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा ऐसा कार्य करता है अथवा ऐसा कथन प्रकाि"त करता है, जो–

1. किसी न्यायिक कार्यवाही के सामने प्रतिकूल प्रभाव डालता है अथवा उसमें हस्तक्षेप करता है।
2. किसी न्याय प्र"ाासन में किसी अन्य रीति से हस्तक्षेप करता है या जिसकी प्रकृति हस्तक्षेप करने की है अथवा जो उसमें बाधा डालता है या जिसकी प्रवृत्ति बाधा डालने की है।
3. किसी न्यायालय को कलंकित करता है।

आपराधिक अवमानना के आवश्यक तत्व (Elements of Civil Contempt)

आपराधिक अवमानना के निम्नलिखित आव"यक तत्व हैं–

1. न्यायालय को कलंकित करना अथवा न्यायालय के प्राधिकार को कम करना,
2. न्यायिक प्रकिया के सम्यक् अनुक्रम को क्षति पहुँचाता हो,
3. किसी अन्य तरीके से न्यायिक प्र"ाासन मे हस्तक्षेप करना अथवा बाधा डालना।
4. **न्यायालय को कलंकित करना अथवा न्यायालय के प्राधिकार को कम करना** ऐसा प्रका"ान अथवा कृत्य जो न्यायालय को कलंकित करता है अथवा उसके प्राधिकार को कम करता है आपराधिक श्रेणी में आता है।
5. **किसी न्यायिक कार्यवाही के सम्यक् अनुक्रम को क्षति अथवा उसमें हस्तक्षेप**–ऐसे प्रका"ान जो किसी न्यायिक प्रकिया के सम्यक अनुक्रम पर विपरीत प्रभाव डालता हो या हस्तक्षेप करता हो, न्यायालय का अवमानना माना जाता है। वस्तुतः मीडिया विचारण अथवा समाचार पत्र द्वारा विचारण को उचित नहीं माना जाता है क्योंकि इससे विचारण की स्वच्छता पर प्रभाव पड़ता है और किसी वि"ाष्ट मामले में प्रतिकूल प्रभाव की सम्भावना रहती है अथवा न्याय के सम्यक् प्र"ाासन में हस्तक्षेप किए जाने की भी सम्भावना होती है।
6. **न्याय–प्रशासन में किसी अन्य तरीके से हस्तक्षेप अथवा बाधा डालना**–प्रका"ान अथवा किसी ऐसे कार्य को, जो न्याय प्र"ाासन को किसी अन्य तरीके से बाधित करता हो या उस उस पर हस्तक्षेप करता हो आपराधिक अवमाननाना माना जाता है।

अवमाननाओं की विवेचना

न्यायालय के अधिकारियों के ऊपर हस्तक्षेप—एक अधिवक्ता न्यायालय का अधिकारी होता है और इसके व्यावसायिक कार्यों में हस्तक्षेप किए जाने को न्यायालय की अवमाननाना माना जाता है। उसका कर्तव्य न्यायालय को मामले की विधि एवं तथ्यों के सम्बन्ध में सूचित करना तथा सही निष्कर्ष पर पहुँचकर न्याय करने में न्यायलय की सहायता करना होता है। अधिवक्ता के ऊपर हस्तक्षेप करना न्यायालय की अवमाननाना है।

पक्षकारो के साथ हस्तक्षेप—पक्षकारों के मध्य विवाद् का विनि"चय करना न्यायालय का कार्य है। ऐसा कोई भी आचरण जो किसी पक्षकार के न्यायालय के माध्यम से किसी उप—कर की प्राप्ति करता हो न्यायालय की अवमाननाना माना जाता है,

न्यायालय की कार्यवाही का दुरूपयोग—न्यायालय की कार्यवाही के दुरूपयोग को, जिससे न्यायिक कार्यवाही के सम्यक् अनुक्रम अथवा न्याय—प्र"ाासन में बाधा आती हो, न्यायालय की

अवमाननाना माना जाता है। न्यायालय की कार्यवाही के छोटे—छोटे दुरूपयोग का निस्तारण पंक्षकारों के मध्य सुसंगत वैधानिक प्रावधानों के अधीन कार्यवाही करके किया जाना चाहिए किन्तु ऐसा आचरण जो न्यायिक प्रक्रिया का दुरूपयोग करता हो इसके प्रभाव को पक्षकारों से परे कार्य के लिए विस्तृत कर देता हों और जनता के हित को प्रभावित करता हो, न्यायालय की अवमानना माना जाएगा।

अहमद अली बनाम सुपरिण्टेण्डेन्ट जेल, तेजपुर के वाद में न्यायालय ने न्यायालय के अवमाननाना की परिभाषा के औचित्य के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किया है। जिसके अनुसार न्यायालय के सम्मान और गरिमा की रक्षा करना अत्यन्त आव"यक है। यह आव"यकता है कि इसे किसी के भी द्वारा इस किए गए उस हमले से बचाया जाए जो कि न्यायालय की गरिमा को नष्ट करता हो अथवा जनसाधारण की दृष्टि में न्यायालय की प्रतिष्ठा को धूमिल करता है। संगठित समाज में न्याय के अस्तित्व के लिए यह आव"यक है कि जनसाधारण का न्यायिक प्र"ाासन में वि"वास बना रहे और इसे नष्ट करने वाले कृत्य का रोकना आव"यक है। कौन—सा

कृत्य अथवा आचरण न्यायालय की गरिमा और प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचाएगा, यह निर्"चत करना न्यायालय का कार्य होना चाहिए।

सिविल अवमानना में दो गई प्रतिरक्षाएँ (Defences available to a contemner in civil contempt)

1. **अवज्ञा अथवा भंग जानबूझ कर नहीं की गयी थी**—सिविल अवमाननाना हेतु न्यायल के आद"ा, डिक्री आदि की अवज्ञा अथवा न्यायालय को दिए गए वचन का भंग जानबूझकर नहीं होना चाहिए इसके परिणामस्वरूप, यह एक प्रतिरक्षा होगी कि अवज्ञा भंग इच्छापूर्वक नहीं थी। यदि किसी व्यक्ति को न्यायालय के आदे"ा की जानकारी हो और उसे इसके परिणामों की जानकारी है और वह इस विषय में सचेत भी है, और न्यायालय के आदे"ा की विवक्षा इसकी अपेक्षा करती है, तो अवज्ञा को जानबूझकर की गयी माना जा सकता है।
2. **आदेश अधिकारिता के बिना ही पारित कर दिया गया है**—यदि अवज्ञा आदे"ा न्यायालय द्वारा अधिकारिता के बिना ही पारित किया गया साबित हो जाता है अथवा उल्लंघन किया गया वचनबद्ध ऐसी कार्यवाही में दिया गया साबित होता हो
3. जाता है अथवा उल्लंघन को न्यायालय की अवमाननाना नहीं माना जा सकता।
4. वस्तुतः अधिकारिता से रहित आदे"ा शून्य होता है और शून्य आदे"ा किसी को भी बाधित नहीं करता है
5. **जहाँ अवज्ञा किया गया आदेश अस्पष्ट अथवा संदिग्धार्थ हो**—अवमानना की यह प्रतिरक्षा होगी कि आदे"ा अस्पष्ट अथवा संदिग्धार्थ था। किसी आदे"ा को अस्पष्ट तभी कहा जाता है जब वह विनिर्दिष्ट एवं पूर्ण नहीं होता है। न्यायालय के आदे"ा की अवज्ञा के लिए अवमानना कार्यवाहियाँ करने हेतु आदे"ा का विनिर्दिष्ट एवं पूर्ण होना आव"यक है

   विनीत कुमार बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया—के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि शब्दों को अनुचित अर्थों की स्वीकृति प्रतिरक्षा के रूप में नहीं दी जा सकती है। यथास्थिति आदे"ा के प्रभाव पर किसी सन्देह के मामले में पक्षकार को स्पष्टीकरण की इच्छा करत हुए न्यायालय की शरण लेनी चाहिए।
6. **आदेश में एक से अधिक युक्तियुक्त व्याख्याएँ अन्तर्ग्रस्त होती हैं**—यदि न्यायालय के आदे"ा में एक से अधिक युक्तियुक्त एवं यथार्थ व्याख्याएँ अन्तर्ग्रस्त हाती हैं और प्रत्यार्थी

उनमें से एक को अंगीकार कर उसी व्याख्या के अनुसार कार्यवाही करता है तो उस न्यायालय की अवमाननाना के लिए दायी नहीं ठहराया जाएगा।

7. **आदेश का अनुपालन असम्भव**–अवमानना की कार्यवाही में यह एक प्रतिरक्षा है कि न्यायालय के आदे"ा का अनुपालन असम्भव।

   अमर सिंह बनाम के0 पी0 गीता कृश्णन के मामले में न्यायालय के आदे"ा द्वारा सेवानिवृत्त कर्मचारियों क पें"ान से सम्बन्धित कतिपय लाभ प्रदान किया गया था। वह कहा गया था कि आदे"ा लागू करने का परिणाम सरकार के खजाने पर भारी वित्तीय भार पड़ेगा। इस अभिवाक् को अमान्य कर दिया जाता है और यदि यह पाया जाता है कि आदे"ा का कियान्वयन व्यावहारिक रूप से सम्भव नहीं था तो केवल आदे"ा के अनुपालन की असम्भावना के अभिवाक् की स्वीकृति प्रतिरक्षा के रूप में जा सकती है।यह साबित करना अवमानना के आरोपी व्यक्ति पर है कि आदे"ा का अनुपालन असम्भव था।

8. **आदेश का कोई ज्ञान न होना**–किसी व्यक्ति को न्यायालय के उस आदे"ा के अतिलंघन करने पर अवमाननाना का दोषी नहीं ठहराया जा सकाता है जिसके विषय पर उसे कोई जानकारी न हो।

   सुकूम मुखोपाध्याय बनाम टी0 डी0 करम चन्दानी के मामले में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने यह कहा कि किसी आज्ञापक आदे"ा के उल्लंघन के विषय मे किसी व्यक्ति के आरोपित होने के मामले में, वह बचाव में यह सफलतापूर्वक अभिवाक् कर सकता है आदे"ा औपचारिक रूप से उस पर नहीं था।

विधिज्ञ परिषद द्वारा दिये गये दण्ड के विरूद्ध उपचार

1. **क्षमा–याचना**–न्यायालय अवमाननाना अधिनियम की धारा 12 के अनुसार न्यायालय के अवमाननाना के अभियुक्त को आरापमुक्त किया जा सकता है अथवा अधिनिर्णीत दण्ड का परिहार न्यायलय की सन्तुष्टि में की गयी क्षमा–याचना पर किया जा सकता है।
2. **पुनर्विलोकन**–राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनु"ाासन समिति इस अध्याय के अधीन अपने द्वारा पारित किसी आदे"ा का, उस आदे"ा की तारीख से साठ दिनो के भीतर,स्वप्रेरणा से या अन्यथा, पुनर्विलोकन कर सकेगी। हालाँकि, किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनु"ाासन

समिति का ऐसा कोई पुनर्विलोकन आदे"ा तब तक प्रभावी नही होगा जब तक वह भारतीय विधिज्ञ परिषद् द्वारा अनुमोदित न कर दिया गया हो।

3. **अपील**—किसी राज्य विधिज्ञ परिषद के अनु"ाासन समिति की धारा 35 के अधीन किए गए आदे"ा से पीड़ित कोई व्यक्ति आदे"ा की सूचना की तारीख के 60 दिनों के भीतर, भारतीय विधिज्ञ परिषद को अपील कर सकता है। ऐसी अपील की सूनवाई भारतीय विधिज्ञ परिषद् की अनु"ाासन समिति द्वारा की जएगी

उच्चतम न्यायालय को अपील—धारा 38 भारतीय विधिज्ञ परिषद् की धारा 36 या धारा 37 के अधीन या, यथस्थिति भारत के महान्यायवादी या सम्बद्ध राज्य के महाधिवक्ता द्वारा किए गए आदे"ा से पीड़ित कोई व्यक्ति उस तारीख से साठ दिनों के भीतर जिसको उसे वह आदे"ा

संसूचित किया जाता है, उच्चतम न्यायालय को अपील कर सकेगा और उच्चतम न्यायालय उस पर ऐसा आदे"ा (जिसके अन्तर्गत भारतीय विधिज्ञ परिषद् की अनु"ाासन समिति द्वारा अधिनिर्णीत दण्ड में परिवर्तन का आदे"ा भी है) पारित कर सकेगा, जैसा वह ठीक समझे

अतः अनु"ाासन समिति द्वारा पारित आदे"ाके विरूद्ध अपील भारतोय विधिज्ञ परिषद् में की जा सकती है तथा भारतीय विधिज्ञ परिषद् के आदे"ा के विरूद्ध अपील धारा 38 के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय में पे"ा की जा सकती है।

सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया A.I.R. 1998 S.C. 1895 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट कर दिया है कि न्यायालय की अवमानना की अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अधिवक्ता का प्रक्टिस करने का लाइसेन्स निलम्बित या रद्द नही कर सकता इस प्रकार का दण्ड अधिवक्ता अधिनियम की धारा 38 के अन्तर्गत दिया जा सकता है।

दान्डिक अवमान में अवमानकर्त्ता को उपलब्ध बचाव (Innocent publication and distribution of matter)

1. **सामग्री का निर्दोश—प्रकाशन एवं वितरण**—कोई व्यक्ति इस आधार पर न्यायालय के अवमान का दोषी नहीं होगा कि उसने चाहे बोले गये या अंकित किये गये शब्दों द्वारा या, संकेतों द्वारा, या दृष्यरूपणों द्वारा या अन्यथा कोई विषय पकाशित किया है जो प्रकाशन के

समय लम्बित किसी सिविल या दाण्डिक कार्यवाही के सम्बन्ध में न्याय के अनुक्रम में अड़चन पैदा करता है या अड़चन पैदा करने की प्रवृत्ति रखता है या उसको बाधित करता है या बाधित करने की प्रवृत्ति रखता है, यदि उस समय उसे विश्वास करने का कोइ युक्तियुक्त आधान न हो कि वह कार्यवाही लम्बित थी।

2. **न्यायिक कार्यवाहियों की उचित एवं यथार्थ रिपोर्ट**—कोई व्यक्ति किसी न्यायिक कार्यवाही या उसकी किसी अवस्था का उचित एवं सही प्रतिवेदन प्रकाशित करने के लिए न्यायालय अवमान का दोषी न होगा।
3. **न्यायिक कार्य की उचित आलोचना**—उचित आलोचना के लिए आवश्यक है कि आलोचना में न्यायधीश पर यह आरोप न लगाया गया हो कि उसमें उसका कोई अन्तरस्थ हेतु था
4. **अधीनस्थ न्यायालय के पीठासीन अधिकारियों के विरूद्ध सद्भावपूर्ण परिवाद**—कोई व्यक्ति किसी ऐसे कथन के बारे में जो उसने सद्भावना से किसी ऐसे अधीनस्थ न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के सम्बन्ध में किया हो, तो वह न्यायालय अवमान का दोषी नहीं होगा।
5. **न्यायालय के उचित अनुक्रम में कोई तात्विक हस्तक्षेप नहीं**—न्यायालय अवमान के कोई दण्डादेश तब तक आरोपित नही करेगा जब तक कि उसको यह समाधान न हो जाए कि अवमान इस प्रकार का है कि वह न्याय क सम्यक् अनुक्रम में या तो सारभूत रूप से हस्तक्षेप करता है
6. **न्यायधीश की व्यक्तिगत रूप से निन्दा**—यदि प्रकाशन या अन्य कार्य निन्दा हो और उससे केवल न्यायधीश पर हमला किया जाता हो और उसके द्वारा न्याय के प्रशासन म किया जाता हो, तो इसे न्यायालय के अवमान के रूप में स्वीकार नहीं किया जायेगा।
7. **परिवादित कथन पर भिन्न—भिन्न प्रकार की व्याख्याओं के लिए छूट**—यदि परिवादित शब्दों की दो भिन्न—भिन्न तरीकों से व्याख्या की जाती है और उनमें से एक अवमान का संकेत करती है जबकि द्सरी ऐसा नहीं करती है तो अवमान के अपराध को साबित नहीं समझा जा सकता है।

8. **शिकायत किये गये कथन का न्यायधीश के कार्य से कोई सम्बन्ध न होना**—प्रकाशन या किसी अन्य कार्य को न्यायालय का अवमान केवल तभी माना जायेगा जब इसका सम्बन्ध न्यायधीश के कार्य करने से हो।

एक आदर्श अधिवक्ता के गुण (Merits of An Ideal Advocate)

1. **इमानदारी**— अधिवक्ता अपने व्यवसाय के प्रतिपूर्ण रूप से ईमानदार रहें। ईमानदारी केवल व्यवसाय के प्रति ही नहीं वरन् न्यायालयों तथा पक्षकारों के प्रति भी होनी चाहिए।
2. **साहस**—अधिवक्ताओं को न्यायालय के समक्ष अपना पक्ष प्रस्तुत करने का साहस होना चाहिए। वह अपने पक्ष को निडरता से प्रस्तुत करे। साहसी अधिवक्ता ही विधि व्यवसाय में सफल हो सकता है।
3. **परिश्रम**—अधिवक्ता जितना अधिक परिश्रम करेगा उसे उतनी अधिक सफलता प्राप्त होगी। विधि व्यवसाय मं अधिवक्ताओ को वाद तथा परिवाद तैयार करने से लेकर निर्णय तक अनेक स्तरों से जाना होता है। अतः परिश्रम द्वारा ही वह सफलता प्राप्त कर सकता है।
4. **वाक् चातुर्य**— एक सफल अधिवक्ता के लिए आव"यक ह कि उसमें समय के अनुकूल बोलने की क्षमता हो। न्यायालय में अभद्र भाषा का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
5. **सरल स्वभाव**—अधिवक्ता को सदैव सौम्यता का परिचय देना चाहिए। न्यायालय में उसका आचरण न्यायोचित होना चाहिए।
6. **विधिक ज्ञान**—अधिवक्ता की सफलता का कारण विधिक ज्ञान है। उसे कानून का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। समय—समय पर कानून बदलता रहता ह। विभिन्न न्यायिक निर्णय भी आते रहत हैं। इसलिए अधिवक्ता को नवीनतम कानून एवं न्यायिक निर्णयों से परिचित रहना चाहिए।
7. **अभिव्यक्ति की कला**—अधिवक्ता में अभिव्यक्त करने की कला होना आव"यक है। अधिवक्ता को भाषा पर पूर्ण अधिकार हो, उसकी अभिव्यक्ति का तरीका कलात्मक हो।

अधिवक्ताओं के लिए प्रतिबन्धित कार्य (Restricted Work for An Advocate)

1. **निर्धारित योग्यता के बिना वकालत करना**—अधिवक्ता अधिनियम,1961 की धारा 45 के अन्तर्गत विधि व्यवसाय के लिए अपेक्षित शैक्षणिक योग्यता तथा बार कौंसिल में बिना सनद प्राप्त किए वकालत नहीं कर सकता है।
2. **अन्य कोई व्यवसाय न करना**—यदि कोई अधिवक्ता विधि व्यवसाय के साथ कोई अन्य व्यवसाय करता है तो वह विधि व्यवसाय के साथ न्याय नहीं कर पाता है—
3. **अनुचित एवं अनावश्यक हड़ताल न करना**—अधिवक्ताओं को अनाव"यक रूप से न्यायालय में अनुपस्थित नहीं रहना चाहिए और न ही हड़ताल करनी चाहिए। पंजाब व हरियाणा उच्च न्यायालय ने हड़ताल को आचार संहिता के विपरीत माना तथा कहा कि अधिवक्ताओं को ऐसी प्रवृत्ति से बचना चाहिए।
4. **वादग्रस्त सम्पत्ति को कय न करना**—अधिवक्ताओं को अपने पक्षकार की वादग्रस्त सम्पत्ति का क्रय नहीं करना चाहिए ऐसा करना आचार संहिता के विपरीत है।
5. **अपने पक्षकारों को गलत राय न देना**—अधिवक्ताओं को अपने पक्षकारों को सही राय देनी चाहिए।
6. **किसी अन्य अधिवक्ता के मामले में अनावश्यक हस्तक्षेप न करना**—अधिवक्ता का यह कर्त्तव्य है कि वह केवल अपने मामले तक ही सीमित रहे। अन्य अधिवक्ताओं के मामले में हस्तक्षेप वृत्तिक कदाचार की परिधि में आता है।
7. **विरोधी पक्षकार से दुरभि संधि न करना**—अधिवक्ता को अपने पक्षकारों के साथ निष्ठावान रहना चाहिए। अधिवक्ताओं को विरोधी पक्षकार से कोई समझौता नहीं करना चाहिए। और न ही उन्हें कोई राय देनी चाहिए।

राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुशासन समिति

1. **गठन**—अधिवक्ता अधिनियम की धारा 35 के अनुसार जहाँ किसी ि"ाकायत की प्राप्ति पर या अन्यथा, किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् के पास यह वि"वास करने का कारण है कि उसकी नामावली का कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य दुराचार का दोषी रहा है वहाँ वह मामले की,अपनी अनु"ाासन समिति को निपटारे के लिए, निर्दिष्ट करेगी।राज्य विधिज्ञ

परिषद् से अपेक्षित है कि वह अपनी नामावली के अधिवक्ताओं के विरूद्ध अवचार के मामले ग्रहण करे तथा उनका अवधारण करे।

2. धारा 9 के अनुसार राज्य विधिज्ञ परिषद् एक या अधिक अनु"ाासन समितियों का गठन करेगी। प्रत्येक ऐसी समिति तीन व्यक्तियों से मिलकर बनेगी। इसमें से दो सदस्य परिषद द्वारा अपने सदस्यों में निर्वाचित व्यक्ति होंगे तथा तीसरा सदस्य परिषद् द्वारा ऐसे अधिवक्ताओं में से होगा जिसके पास धारा 3 की उपधारा (2) के परन्तुक के अधीन विनिर्दिष्ट अर्हताएँ हों तथा जो परिषद् का सदस्य न हो और इस अनु"ाासन समिति के सदस्यों में से ज्येष्ठतम अधिवक्ता उसका अध्यक्ष होगा।

3. **प्रारम्भ तथा प्रकिया**—अनु"ाासन समिति उन मामलों की जाँच करेगी जो राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा उसे विनिर्दिष्ट किए जाएँगे ।अधिवक्ता अधिनियम की धारा 35 के अनुसार जहाँ किसी ि"ाकायत की प्राप्ति पर या अन्यथा, किसी राज्य विधिज्ञ परिषद् क पास यह वि"वास करने का कारण है कि उसकी नामावली का

4. कोई अधिवक्ता वृत्तिक या अन्य अवचार का दोषी रहा है वहाँ वह मामले को,अपनी अनु"ाासन समिति को निपटारे के लिए निर्दिषट करेगा।

5. **शक्तियाँ**—अधिवक्ता अधिनियम की धारा 35 (3) के अनुसार राज्य विधिज्ञ परिषद् की अन"ाासन समिति, सम्बद्ध अधिवक्ता और महाधिवक्ता को सुनवाई का अवसर देने के बाद निम्नलिखित आदे"ाों में से कोई आदे"ा पारित कर सकेगी अर्थात्

   - ि"ाकायत खारिज कर सकेगी या जहाँ राज्य विधिज्ञ परिषद् की प्रेरणा पर कार्यवाहियाँ आरम्भ की गई थीं वहाँ वह निर्दे"ा द सकेंगी कि कार्यवाहियाँ फाइल कर दी जाएँ,
   - अधिवक्ता को धिग्दण्ड दे सकेगी,
   - अधिवक्ता को विधि—व्यवसाय से उतनी अवधि के लिए निलम्बित कर सकेगी जितनी कि वह ठीक समझे,
   - अधिवक्ता का नाम, अधिवक्ता की नामावली से हटा सकेगी।

राज्य विधिज्ञ परिषद् को अनुशासन समिति की शक्तियाँ

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 42 की उपधारा (1) के अनुसार राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनु"ाासन समिति को निम्नलिखित बातों के सम्बन्ध में वही शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो सिविल प्रक्रया प्रक्रिया, 1908 के अधिन सिविल न्यायालय में विहित हैं, अर्थात्

- किसी व्यक्ति को सम्मन करना तथा उसे हाजिर करना औश्र शपथ पर उसकी परीक्षा करना,
- किन्हीं दस्तावेजों को प्रकट करने तथा पेश करने की अपेक्षा करना,
- शपथपत्रों पर साक्ष्य लेना,
- किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी–अभिलेख की प्रतिलिपियों की अपेक्षा करना,
- साक्षियों या दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन निकालना,
- कोई अन्य बात जो विहित की जाए।

परन्तु किसी भी ऐसी अनुशासन समिति को

- किसी न्यायालय के पीठासीन अधिकारी को, उस उच्च न्यायालय की पूर्व मंजूरी के बिना जिसके अधीनस्थ ऐसा न्यायालय है, तथा
- किसी राजस्व न्यायालय के किसी अधिकारी को राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना, खारिज कराने का अधिकार नहीं होगा।

अनुशासन समिति के दण्ड के आदेश के विरूद्ध अधिवक्ता को उपचार

अधिवक्ता अधिनियम की धारा 35 राज्य विधिज्ञ परिषद् की अनुष्ज्ञासन समिति को यह शक्ति प्रदान करती है कि वह किसी अधिवक्ता को वृत्तिक अथवा अन्य अवचार के लिए दण्ड दे सकती है। धारा 36 अनु"ाासन समिति को यह शक्ति देती है कि वह किसी अधिवक्ता को उसके द्वारा किए वृत्तिक अथवा अन्य अवचार के लिए दंण्डित कर सकेगी। अधिवक्ता अधिनियम दण्ड के विरूद्ध उपचार के सम्बन्ध में उपबन्ध करता है। ये उपचार निम्न हैं–

1. पुनर्विलोकन
2. अपील

भारतीय विधिज्ञ परिषद् (Bar Council Of India)

विधिज्ञ परिषद का गठन—अधिनियम, की धारा 4 (1) के अन्तर्गत उन राज्य क्षेत्रों के लिये, जिन पर इस अधिनियम का विस्तार है, भारतीय विधिज्ञ परिषद के नाम से ज्ञात एक विधिज्ञ परिषद होगी, जो निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात्—

1. भारत का महान्यायवादी पदेन।
2. भारत का महासालिसिटर पदेन।
3. प्रत्येक राज्य विधिज्ञ परिषद् द्वारा अपने सदस्यों मे से एक निर्वाचित सदस्य।
4. कोई भी व्यक्ति भारतीय विधिज्ञ परिषद के सदस्य के रूप में निर्वाचित होने के लिय तब तक पात्र नहीं होगा, जब तक उसके पास धारा 3 की उपधारा (2) के परन्तुक में वर्णित योग्यातायें न हों।

(2) भारतीय विधिज्ञ परिषद का एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष होगा जो उस परिषद द्वारा ऐसी रीति से निर्वाचित किया जायेगा, जो निर्धारित की जाए।

(3) भारतीय विधिज्ञ परिषद के एसे सदस्य की जो राज्य विधिज्ञ परिषद द्वारा निवांचित किया गया हो। **पदावधि**—

- राज्य विधिज्ञ परिषद के ऐसे सदस्य की द"ाा में जो वह पद पदेन धारण करता हो, उसके निर्वाचन की तारीख से दो वर्ष होगी,या उस अवधि तक होगी सिको वह राज्य विधिज्ञ परिषद का सरदस्य न रह जाए, इनमें से जो भी अवधि पहले हो, और
- किसी अन्य दशा में उतनी अर्वाध के लिये होगी जितनी के लिये यह राज्य विधिज्ञ परिषद का सदस्य के रूप में पद धारणकरता हो।

भारतीय विधिज्ञ परिषद के कार्य

अधिवक्ता अधिनियम, 1961 की धारा 7 के अनुसार, भारतीय विधिज्ञ परिषद के कार्य निम्नलिखित है–

1. वकोलों के लिये वृत्तिक आधार और ि"ाष्टाचार के मानक निर्धारित करना।
2. अपनी अनु"ाासन समिति द्वारा और प्रत्येक राज्य विधिज्ञ परिषद की अनु"ाासन समिति द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया निर्धारित करना।
3. वकीलों के अधिकारों, वि"ोषधिकारों और हितों की रक्षा करना।
4. विधि सुधार का उन्नयन और उसका समर्थन कराना।
5. इस अधिनियम के अधीन उत्पन्न होने वाले किसी ऐसे मामले मे कार्यवाही करना और उसे निपटाना, जो इसे किसी राज्य विधिज्ञ परिषद द्वारा निर्दिष्ट किया जाए।
6. राज्य विधिज्ञ परिषदों का साधारण पर्यवेक्षण और उन पर नियन्त्रण रखना।
7. विधि ि"ाक्षा का उन्नयन करना और ऐसी ि"ाक्षा प्रदान कराने वाले भारत के वि"वविधालयों और राज्य विधिज्ञ परिषदों से विचार–विम"ार करके ऐसे ि"ाक्षा के मानक निर्धारित करना।
8. ऐसे वि"वविधालयों को मानयता देना, जिनकी विधि की उपाधि वकील के रूप मे नामांकित किए जाने के लिये अर्हता होगी और उस प्रयोजन के लिये वि"वविधालयों में जाना और उनका निरीक्षण।
9. विधिक विषयों पर प्रतिष्ठित विधि–"ाास्तियों द्वरा परिसंवादों का संचालन और वार्ताओं का आयोजन करना और विधि रूचि की पत्र–पत्रिकाएँ और लेख प्रकाि"ात करना।
10. विधिज्ञ परिषद की निधियों का प्रबन्ध और उनका विनिधान करना।
11. इस अधिनियम द्वारा या उसके अधीन विधिज्ञ परिषद को प्रदत्त अन्य सभो कार्यों का पालन करना।
12. अपने सदस्यों के निर्वाचन की व्यवस्था करना।

तमिलनाडु राज्य बनाम श्रीमतो कन्नामल के वाद में विद्वान न्यायाधी"ा ने यह निर्णय दिया कि कोई भी वि"वविधालय बार काउसिंल ऑफ इण्डिया से निर्दे"ा प्राप्त किये बिना वकीलों के

रूप में पंजीकृत किए जाने हेतु प्रदत्त विधि के ि"ाक्षा के पाठ्यक्रम में कोई परिवर्तन नहीं कर सकता है।

इंण्डियन काउंसिल बनाम बार काउंसिल,में न्यायधी"ाों ने विचार व्यक्त किया कि ऐसा नियम कि जिन व्यक्तियें न 45 वर्ष की आय प्राप्त कर ली है, उनको बहैसियत वकील पंजीकृत नहीं किया जायेगा। यह बार काउंन्सिल की शक्ति के बाहर है, अतः शून्य है। बार काउंसिल अधिवक्ता अधिनियम के अन्तर्गत आयु परक कोई प्रतिबन्ध नहीं लगा सकती, क्योंकि अधिनियम की धारा 24 के अनुसार आयु आव"यक शर्त नहीं मानी गई है।

(State Bar Councils) राज्य विधि परिषद

राज्य विधिज्ञ परिषद् धारा 3 (1) के अनुसार,आंध्र प्रदे"ा, बिहार, गुजरात, जम्मू–क"मीर,मध्य प्रदे"ा, कर्नाटक, उड़ीसा,राजस्थान, मणिपूर और त्रिपुरा और उत्तर प्रदे"ा राज्य में से प्रत्येक के लिए उस राज्य की विधिज्ञ परिषद् के नाम से ज्ञात एक विधिज्ञ परिषद् होगी

राज्य विधिज्ञ परिषद् का गठन–

1. यह संस्था निम्नलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगी, अर्थात् दिल्ली राज्य विधिज्ञ परिषद् की द"ाा म भारत का अपर महासालिसिटर, पदेन, असम, नागालैंड, मेघालय, मणिपूर और
2. त्रिपूरा राज्य की द"ाा मे प्रत्येक राज्य, का महाधिवक्ता, पदेन,
3. पंजाब और हरियाणा राज्य विधिज्ञ परिषद् की द"ाा में प्रत्येक राज्य, का महाधिवक्ता, पदेन,
4. और किसी अन्य राज्य विधिज्ञ परिषद् की द"ाा में उस राज्य का महाधिवक्ता पदेन।

राज्य विधिज्ञ परिशद् के कार्य–

1. अपनी नामावली में अधिवक्ता के रूप में व्यक्तियों को प्रविष्ट देना,
2. ऐसी नामावली तैयार करना और बनाए रखना,
3. अपनी नामवली के अधिवक्तओं के विरूद्ध अवचार के मामले ग्रहण करना और उनका अवधारण करना,

4. अपनी नामावली के अधिवक्ताओं के अधिकारों, वि"ोषाधिकारों और हितों की रक्षा करना।
5. विधि सुधार का उन्नयन और उसका समर्थन करना
6. विधिक विषयों पर प्रतिष्ठित विधि"ाास्त्रियों द्वारा परिसंवादों का संचालन और वार्ताओं का आयोजन करना और विधिक रूचि की पत्र–पत्रिकाएँ और लेख प्रका"ित करना
7. विधिज्ञ परिषद् की निधियों का प्रबन्ध और उनका विनिधान करना
8. अपने सदस्यों के निर्वाचन की व्यवस्था करना

मौलिक अधिकारों को लागू करने के संवैधानिक उपचार

अधिकारों का अस्तित्व उपचारों पर आधारित है।उपचारों के अभाव में मूल अधिकारों का अस्तित्व ही सम्भव नहीं है। संवैधानिक उपचारों का अर्थ उस उपाय से है जो मूल अधिकारों का राज्य द्वारा भंग किये जाने पर उन्हें लागू करने के उद्दे"य से संविधान में दिये गये हैं। मूल अधिकारों को लागू करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय को काफी विस्तत अधिकार प्राप्त हैं।संविधान निम्नलिखित उपचारों की व्यवस्था करता है।

1. **अनुच्छेद 32** जो स्वयं एक मूल अधिकार है।
2. अनुच्देद 32 (1) सुप्रीम कार्ट को यह शक्ति देता है कि वह निर्दे"ा आदे"ा, या समादे"ा जारी करें, जिसमें (अ) बन्दी प्रत्यक्षीकरण, (ब) परमादे"ा, (स) अधिकार पृच्छा तथा (य) उत्प्रेषण आदि समादे"ा शामिल हैं।
3. **अनुच्देद 32 (1) के अनुसार**, संसद कानून द्वारा किसी दूसरे न्यायालय को अपने क्षेत्राधिकार की स्थानीय सीमाओं के अन्दर सुप्रीम कोर्ट द्वारा खण्ड (2) के अधीन प्रयोग की जाने वाली सभी या किन्ही शक्तियों के प्रयोग करने का अधिकार देती है।
4. **अनुच्छेद 32 (4) के अनुसार,** संविधान द्वारा उपबन्धित व्यवस्था के सिवाय इस अनु0 द्वारा गारण्टी किये गये अधिकारों को निलम्बित न किया जायेगा।

रिट के प्रकार

1. **बन्दी प्रत्यक्षीकरण**–बन्दी प्रत्याक्षीकरण का शाब्दिक अर्थ है,'बन्दी को न्यायालय के सामने उपस्थित करो।'यदि किसी व्यक्ति या नागरिक को गैर कानूनी ढंग से कार्यकारिणी के

किसी पदाधिकारी द्वारा बन्दी बनाया गया है या कारावास मे रखा गया है तो वह इस लेख का प्रयोग अपनी मुक्ति के लिये कर सकता है। इस लेख की प्रार्थना बन्दी व्यक्ति स्वयं या उसकी ओर से उसके किसी मित्र या रि"तेदार द्वारा भी की जा सकती है। जब न्यायालय के द्वारा बन्दी की प्रार्थना पर लेख जारी किया जाता है तो उस पदाधिकारी को, जिसने प्रार्थी को अपनी अभिरक्षा में रखा हुआ है, यह आदे"ा दिया जाता है कि बन्दी को अदालत के सामने उसके बन्दी बनाये जाने के कारणों को बताते हुए उपस्थित करे। यदि प्रथम दृष्टया यह साक्ष्य है कि बन्दी बनाये जाने के कारणों को बताते हुए उपस्थित करे। यदि प्रथम दृष्टया यह साक्ष्य है कि बन्दी को विधिवत् रोका गया है और उसके परीक्षण के लिए उचित कदम उठाये जा रहे हैं तो उसे अभिरक्षा में वापस दिया जा सकता है। किन्तु यदि उसे रोके जाने के कारण असन्तोषजनक दिखाई देते हैं। तो न्यायालय बन्दी को तुरन्त छोड़ देने का आदे"ा देगा।

2. **परामादेश**– परामादे"ा सबसे अधिक उपचारात्मक ढंग का लेख है, जिसका शाब्दिक अर्थ है **'हम आदेश देते हैं'** इस लेख द्वारा सुप्रीम कोर्ट किसी व्यक्ति या लोक–प्राधिकारी या निचले न्यायालय को निर्दे"ा देता है कि वह उसमें लिखा हुआ कोई वि"ोष कार्य करे, जिसको करना उसका कानूनी या लोक–कर्त्तव्य या संविधानिक कर्त्तव्य है या ऐसे कर्त्तव्यों को गैरकानूनी तरीके से न करे। यह आदे"ा उन सभी मामलों में जारी किया जा सकता है, जहाँ पिटि"नर के पास कोई वि"ोष कानूनी अधिकार है किन्तु उसे लागू करने हेतु कोई वि"ोष उपचार उपलब्ध नहीं हैं।
3. **प्रतिषेध**–यह लेख एक न्यायिक लेख है जो किसी वरिष्ठ न्यायालय द्वारा अधीनस्थ न्यायालयों, न्यायधिकरणों या निकायों को जारी किया जाता है जिसके द्वारा उन्हें क्षेत्राधिकार की अनुपस्थिति या क्षेत्राधिकार की अधिकता में मुकदमा सुनने की कार्यवाही से रोक दिया जाता है। यह लेख दोनों स्थितियों में जारी किया जाता है– 1. जहाँ **कार्य क्षेत्राधिकार के बाहर** किया जाता है तथा 2. जहाँ **क्षेत्राधिकार का पूर्ण अभाव** होता है।
4. **अधिकार पृच्छा**–इस लेख का शाब्दिक अर्थ है **''आपका क्या अधिकार हैं?''** यह लेख उस व्यक्ति के खिलाफ जारी किया जाता है जिसने किसी **सार्वजनिक पद पर कार्य** या स्वतन्त्रता का दावा किया हो या उसे **छीन** लिया हो। इस लेख द्वारा न्यायालय उससे

पूछता है कि वह किस कानूनी अधिकार से अपने दावे का समर्थन करता है। यदि जाँच करने पर पता चला है कि उसके पास कोई अधिकार नहीं है तो न्यायालय उसे पद कार्य या स्वतन्त्रता से वंचित कर देगा तथा उस पद को रिक्त घोषित कर देगा।

5. **उत्प्रेक्षण**—यह लेख सर्वोच्च या उच्च न्याायलय द्वारा किसी **अधीनस्थ न्यायालय, न्यायिक** या **अर्धन्यायिक कार्यों** के करने वाले **न्यायधिकरण** के निर्णयों की गलतियों को ठीक करने के लिये जारी किया जाता है और आदे"ा दिया जाता है कि अपने द्वारा दिये गये निर्णय को वरिष्ठ न्यायालय में भेज दिया जाये ताकि उनकी वैधानिकता की जाँच की जा सके और यदि दोषपूर्ण हैं तो उन्हें रद्द किया जा सके। वह आदे"ा निम्नलिखित अवस्थाओं में जारी किया जा सकता है—

- निर्णय अधीनस्थ न्यायालय या न्यायाधिकरण द्वारा क्षेत्राधिकार की अधिकता या अनुपस्थिति में दिया गया है।
- निर्णय मे स्पष्ट वैधानिक गलती की गई है।
- निर्णय मे प्राकृतिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन नहीं किया गया है।